मिजोरम राज्य

बनाम

डॉ. सी. संगनिना

(आपराधिक अपील संख्या 1322/ 2018)

30 अक्टूबर, 2018

[आर. भानुमति और इंदिरा बनर्जी, जेजे.]

भारत का संविधान- अनुच्छेद 20 (2)- दोहरे खतरे का सिद्धांत- जब लागू नहीं होता है- प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ अंतर्गत धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) सपठित धारा 13 (2) अधिनियम 1988 और भा.दं.सं. की धारा 409 में मामला दर्ज किया जाता है- विशेष न्यायालय ने उचित मंजूरी की कमी के कारण अभियुक्त/प्रतिवादी को आरोपमुक्त कर दिया और मामले को बंद कर दिया- इसके बाद, राज्यपाल ने पूर्व आदेश का अधिक्रमण करते हुए प्रतिवादी के अभियोजन के लिए मंजूरी दी -मामले को फिर से खोलने के लिए प्रस्तुत प्रतिवादी के खिलाफ नए अभियोजन की मंजूरी के साथ पूरक आरोप पत्र- इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि यह "दोहरे खतरे" के सिद्धांत द्वारा वर्जित था- स्वामित्व- अभिनिर्धारित : चूंकि मंजूरी का पूर्व आदेश अमान्य पाया गया था, इसलिए सक्षम प्राधिकारी के लिए अभियोजन के लिए मंजूरी का उचित आदेश जारी करने पर कोई रोक नहीं है- जब तक कि अभियोजन के

लिए मंजूरी देने में त्रुटि, चूक या अनियमितता के कारण न्याय की विफलता नहीं होती है, अधिनियम 1988 के तहत कार्यवाही को दूषित नहीं किया जा सकता है- नए आरोप पत्र दायर करने से, प्रतिवादी पर कोई पूर्वाग्रह नहीं होता है और न ही इसके परिणामस्वरूप "दोहरे खतरे" के सिद्धांत के तहत न्याय की विफलता को रोका जा सकता है- अनुच्छेद 20 (2) के तहत, किसी भी व्यक्ति को एक हजी अपराध के लिए अंक बार से अधिक अभियोजित और दण्डित नहीं किया जायेगा। 300 (1) दं.प्र.सं. का आधार यह है कि जिस व्यक्ति पर सक्षम न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया था, एक बार बरी या दोषी ठहराए जाने के बाद, उसी अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है- हालांकि, हस्तगत मामले में, प्रतिवादी पर मुकदमा नहीं चलाया गया था क्योंकि उसे मुकदमा शुरू होने से पहले भी उचित मंजूरी की कमी के कारण आरोपमुक्त कर दिया गया था- जहां आरोपी पर बिल्कुल भी मुकदमा नहीं चलाया गया है और दोषी या दोषमुक्त नहीं किया गया है, "दोहरे खतरे" के सिद्धांत को बिल्कुल भी लागू नहीं किया जा सकता है- इस प्रकार, जब प्रतिवादी को उचित मंजूरी के अभाव में इस तरह से आरोपमुक्त कर दिया गया था, तो "दोहरे खतरे" का सिद्धांत लागू नहीं होगा- अभियोजन के लिए वैध मंजूरी प्राप्त करने के बाद नए/पूरक आरोप पत्र दायर करने के लिए कोई रोक नहीं थी- विशेष अदालत और उच्च न्यायालय यह अभिनिर्धारित करते हुए सही नहीं थे कि अभियोजन के लिए उचित मंजूरी आदेश के साथ नए आरोप पत्र को दाखिल करने

पर "दोहरे खतरे" के सिद्धांत के तहत रोक लगा दी गई थी- विवादित निर्णय को अपास्त कर दिया गया- विशेष न्यायालय आरोप पत्र दिनांक 30.01.2014 पर संज्ञान लेगा और कानून के अनुसार आगे कारवाही करेगा- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 -धारा 13(1)(सी)(डी)(ई) सपठित धारा 13(2)-दंड संहिता, 1860 -धारा 409- दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 300 (1)

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 -धारा 19 (3) और (4)-चर्चा की गई।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया : 1.1 चूंकि मंजूरी का पूर्व आदेश अमान्य पाया गया था, इसलिए सक्षम प्राधिकारी के लिए अभियोजन के लिए मंजूरी का उचित आदेश जारी करने पर कोई रोक नहीं है। अदालतें केवल प्राधिकरण द्वारा दी गई मंजूरी में त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत कार्यवाही को रद्द या रोक नहीं देंगी, जब तक कि यह संतुष्ट नहीं हो जाता है कि ऐसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। रोकथाम अधिनियम की धारा 19 की उप-धाराओं (3) और (4) को संयुक्त रूप से पढ़ने से यह स्थिति स्पष्ट होती है कि संहिता में कुछ भी निहित होने के बावजूद, किसी विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित किसी भी निष्कर्ष, सजा और आदेश को किसी न्यायालय द्वारा उप-धारा (1) के तहत आवश्यक

मंजूरी की अनुपस्थिति या किसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर अपील, पुष्टि या संशोधन में उलट या बदला नहीं जाएगा, जब तक कि उस न्यायालय की राय में, न्याय की विफलता वास्तव में इसके कारण नहीं हुई है। तत्काल मामले में, निश्चित रूप से, प्रारंभिक मंजूरी सचिव, डी.पी. एवं ए.आर. मिजोरम सरकार द्वारा दी गई थी। मामले का संज्ञान लेने के बाद, आरोपमुक्त करने का आदेश पारित करने से पहले, विशेष न्यायाधीश को यह पता लगाने के लिए मामले की जांच करनी चाहिए थी कि क्या मंजूरी में ऐसी त्रुटि या अनियमितता के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। विशेष न्यायाधीश या उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा कोई तर्क दर्ज नहीं किया गया कि सचिव द्वारा अभियोजन के लिए दी गई प्रारंभिक मंजूरी के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। जब तक अभियोजन के लिए मंजूरी देने में त्रुटि, चूक या अनियमितता के कारण न्याय की विफलता नहीं होती है, तब तक अधिनियम के तहत कार्यवाही को दूषित नहीं किया जा सकता है। आरोप पत्र दाखिल करने से, प्रत्यर्थी को पूर्वाग्रह का कोई कारण नहीं बनता है और न ही इसके परिणामस्वरूप न्याय की विफलता को "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों के तहत बाधित किया जाएगा। [पैरा 9,10 और 14] [73-सी-जी; 76-ई]

1.2 प्रतिवादी को उचित मंजूरी की कमी के कारण विचारण शुरू होने से भी आरोपमुक्त कर दिया गया था, वैध मंजूरी प्राप्त करने के

बाद नया/पूरक आरोप पत्र दाखिल करने में कोई बाधा नहीं थी। भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 (2) के तहत, किसी भी व्यक्ति पर एक ही अपराध के लिए एक से अधिक बार मुकदमा नहीं चलाया जाएगा और दंडित नहीं किया जाएगा। धारा 300 Cr.P.C में कहा गया है कि एक बार दोषी ठहराए जाने या दोषमुक्त किए जाने के बाद किसी व्यक्ति पर उसी अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। पहले से विचाराधीन किसी व्यक्ति के मुकदमे को रोकने के लिए, यह दिखाया जाना चाहिए- (i) उस अपराध के लिए एक सक्षम न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया है या जिसके लिए उस मुकदमे में उस पर आरोप लगाया गया है या उन्हीं तथ्यों पर दोषी ठहराया गया है; (ii) कि उसे मुकदमे में दोषी ठहराया गया है या दोषमुक्त कर दिया गया है; और (iii) कि ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति होना लागू है। जहाँ अभियुक्त पर बिल्कुल भी मुकदमा नहीं चलाया गया है और उसे दोषी या दोषमुक्त नहीं किया गया है, वहाँ "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों को बिल्कुल भी लागू नहीं किया जा सकता है। धारा 300 (1) Cr.P.C का सम्पूर्ण आधार यह है कि जिस व्यक्ति पर सक्षम न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया था, एक बार दोषमुक्त या दोषी ठहराए जाने के बाद, उसी अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। हस्तगत मामले में, प्रतिवादी/अभियुक्त पर मुकदमा नहीं चलाया गया था और न ही पूर्ण मुकदमा चलाया गया था। दूसरी ओर, विशेष न्यायालय द्वारा पारित आरोपमुक्त करने का आदेश केवल अभियोजन पक्ष से जुड़ी अयोग्यता के

कारण था। जब प्रतिवादी को उचित मंजूरी की कमी के कारण इस तरह से आरोपमुक्त कर दिया गया था, तो "दोहरे खतरे" के सिद्धांत लागू नहीं होंगे। अभियोजन के लिए वैध मंजूरी प्राप्त करने के बाद नए/पूरक आरोप पत्र दाखिल करने पर कोई रोक नहीं थी। विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय का यह मानना सही नहीं था कि अभियोजन के लिए उचित मंजूरी आदेश के साथ नए आरोप पत्र को दाखिल करना "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों के तहत वर्जित था। विवादित फैसले को अपास्त किया जाता है। विशेष न्यायालय, पी.सी.अधिनियम, आइजोल, मिजोरम को दिनांकित 30.01.2014 के आरोप पत्र का संज्ञान लेने और कानून के अनुसार कारवाही करने का निर्देश दिया गया है। [पैरा 14-17 और 18] [76-D, F-H; 77-A-D, F]

गोवा राज्य बनाम बाबू थॉमस **(2005) 8 एससीसी 130:[2005] 3 पूरक एस.सी.आर. 712- संदर्भित।**

नंजप्पा बनाम कर्नाटक राज्य **(2015) 14 एससीसी 186:**

[2015] 8 एससीआर 685- पर निर्भर।

<u>निर्णय विधि संदर्भ</u>

[2005] 3 पूरक एस. सी. आर. 712	**संदर्भित**	**पैरा 11**
[2015] 8 एस. सी. आर. 685	**निर्भरता**	**पैरा 12**

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकारिता : आपराधिक अपील संख्या 1322/ 2018

उच्च न्यायालय असम, नागालैंड, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश, आइजोल की आइजोल पीठ के आपराधिक संशोधन याचिका संख्या 6/ 2014 के दिनांक 13.08.2015 के निर्णय और आदेश से।

डी. महेश बाबू, ए. के. रोकुम, सुश्री सुचित्रा एच., बी. राम कृष्ण राव, टी. वी. भास्कर रेड्डी, अधिवक्तागण अपीलार्थी के लिए।

मनु मृदुल, शालज मृदुल, सुश्री नेहा राय, जितिन चतुर्वेदी, अधिवक्तागण उत्तरदाता के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

आर. भानुमति, न्यायाधिपति

1. अवकाश अनुदत्त की गई।

2. यह अपील असम उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण याचिका संख्या 6/2014 में पारित दिनांक 13.08.2015 के आदेश से उत्पन्न होती है और जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) सपठित धारा 13 (2) के तहत दायर आरोप पत्र को इस आधार पर दायर करने से इनकार करने वाले विशेष न्यायालय के आदेश की पुष्टि की कि इसे "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों के तहत प्रतिबंधित किया गया था।

3. जिन संक्षिप्त तथ्यों के कारण यह अपील दायर की गई, वे हैं कि पीआरआईएसएम के अध्यक्ष द्वारा सार्वजनिक धन के दुरुपयोग/कुप्रबंधन का आरोप लगाते हुए आरोपी/प्रतिवादी के खिलाफ पुलिस अधीक्षक, मिजोरम, आइजोल को 17.02.2009 पर शिकायत की गई थी। शिकायत के आधार पर, पुलिस अधीक्षक, ए.सी.बी. ने एक जांच की और आरोपी/प्रतिवादी के खिलाफ ए.सी.बी. मामला दर्ज करने के अनुरोध के साथ 21.08.2009 पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। जाँच के दौरान, यह पता चला कि प्रत्यर्थी ने आय के ज्ञात स्रोतों के अनुपात से अधिक अपनी मूल्यवान संपत्ति अर्जित कर ली है। जाँच रिपोर्ट प्राप्त होने पर और मिजोरम सरकार, सतर्कता विभाग की मंजूरी लेने के बाद, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (पी. सी. अधिनियम) की धारा धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) सपठित धारा 13 (2) और आई. पी. सी. की धारा 409 के तहत ए. सी. बी. मामला संख्या 3/2009 अभियुक्त/प्रतिवादी के खिलाफ दर्ज किया गया।

4. आरोप पत्र संख्या 6/ 2013 आई.पी.सी. की धारा 409 और पी. सी. अधिनियम की धारा 13 (2) के साथ पठित धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) के तहत दायर किया गया था। विशेष अदालत, पी. सी. अधिनियम ने पाया कि अभियुक्त/प्रतिवादी के खिलाफ अभियोजन की मंजूरी राज्यपाल की मंजूरी के बिना सीधे कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग (डी. पी. एंड ए. आर.) के आयुक्त-सचिव द्वारा जारी की गई थी।

पक्षकारों को सुनने के बाद, विद्वान न्यायाधीश, विशेष न्यायालय, पी. सी. अधिनियम ने दिनांक 12.09.2013 के एक आदेश द्वारा अभियुक्त/प्रतिवादी को उचित मंजूरी के अभाव में उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों से मुक्त कर दिया। विशेष न्यायाधीश ने आई. पी. सी. की धारा 409 के साथ पठित पी. सी. अधिनियम की धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) के तहत ए. सी. बी. मामला संख्या 3/ 2009 से उत्पन्न आपराधिक मामले को बंद कर दिया।

5.तत्पश्चात, सामग्री पर उचित विचार करने के बाद, राज्यपाल ने दिनांक 20.12.2013 के आदेश के माध्यम से, दिनांक 08.04.2013 के पूर्व आदेश को निरस्त करते हुए, प्रतिवादी पर उपरोक्त अपराधों और कानून के किसी भी अन्य प्रावधानों के तहत दंडनीय अन्य अपराधों के लिए मुकदमा चलाने की मंजूरी दी। प्रतिवादी के खिलाफ 20.12.2013 पर जारी नई मंजूरी को देखते हुए, ए. सी. बी. मिजोरम निरीक्षक ने 30.01.2014 पर नए/पूरक आरोप पत्र के साथ-साथ आरोपी/प्रतिवादी के खिलाफ नए अभियोजन की मंजूरी के साथ नए/पूरक आरोप पत्र को स्वीकार करने और मामले को फिर से खोलने के अनुरोध के साथ प्रस्तुत किया।

6. विद्वान न्यायाधीश, विशेष न्यायालय ने आदेश दिनांक 26.08.2014 द्वारा एस. आर. (पी. सी. ए.) संख्या 8/ 2014 को खारिज करते हुए कहा कि दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपने स्वयं के आदेश की

समीक्षा के लिए कोई प्रावधान/गुंजाइश नहीं है। विद्वान न्यायाधीश ने पाया कि दूसरा आरोप पत्र "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है और तदनुसार, नए आरोप पत्र को लेने के आवेदन को दिनांक 26.08.2014 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

7. दिनांक 26.08.2014 के आदेश के साथ-साथ दिनांक 12.09.2013 के पूर्व आदेश से व्यथित होने के कारण, राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष आपराधिक पुनरीक्षण याचिका संख्या 6/ 2014 को प्राथमिकता दी है और इसे उच्च न्यायालय द्वारा विशेष न्यायालय के आदेश की पुष्टि करते हुए खारिज कर दिया गया था कि नए सिरे से मंजूरी के साथ दूसरे आरोप पत्र पर विचार नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय ने यह भी कहा कि दिनांक 12.09.2013 के आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण याचिका पर प्रतिबंध है और पुनरीक्षण याचिका दायर करने में देरी के बारे में राज्य द्वारा कोई उचित स्पष्टीकरण नहीं है।

8. हमने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता को सुना और अभिलेख पर रखे गए विवादित निर्णय और अन्य सामग्रियों का अध्ययन किया है।

9. ए. सी. बी. P.S.C./No.3/2009 में पी. सी. अधिनियम की धारा 13 (2) के साथ पठित धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) के तहत, मिजोरम सरकार के आयुक्त-सचिव (डी. पी. और ए. आर.) द्वारा दिनांकित 08.04.2013 आदेश के माध्यम से प्रतिवादी के खिलाफ अभियोजन की

मंजूरी दी गई थी। आयुक्त-सचिव (डी. पी. एंड ए. आर.) अभियोजन के लिए मंजूरी देने के लिए सक्षम प्राधिकारी नहीं थे और उचित मंजूरी के अभाव में मामला बंद कर दिया गया। चूंकि पहले दी गई मंजूरी सक्षम प्राधिकारी द्वारा नहीं दी गई थी, इसलिए उनके समक्ष रखी गई सामग्री पर उचित विचार करने के बाद, राज्यपाल ने पहले के आदेश दिनांक 08.04.2013 के स्थान पर 20.12.2013 के आदेश के माध्यम से नई मंजूरी दी। मिजोरम सरकार द्वारा प्रत्यर्थी के खिलाफ अभियोजन की मंजूरी को देखते हुए, पुलिस निरीक्षक ने पी. सी. अधिनियम की धारा 13 (2) के साथ पठित धारा 13 (1) (सी) (डी) (ई) के तहत नए/पूरक आरोप पत्र संख्या 3/2014 को स्वीकार करने के लिए 30.01.2014 को एक आवेदन किया। चूंकि मंजूरी का पूर्व आदेश अमान्य पाया गया था, इसलिए सक्षम प्राधिकारी के लिए अभियोजन के लिए मंजूरी का उचित आदेश जारी करने पर कोई रोक नहीं है।

10. अदालतें केवल प्राधिकरण द्वारा दी गई मंजूरी में त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर अधिनियम के तहत कार्यवाही को रद्द या रोक नहीं देंगी, जब तक कि यह संतुष्ट नहीं हो जाता है कि ऐसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। रोकथाम अधिनियम की धारा 19 की उप-धाराओं (3) और (4) को संयुक्त रूप से पढ़ने से यह स्थिति स्पष्ट होती है कि संहिता में कुछ भी निहित होने के बावजूद, किसी विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित किसी भी

निष्कर्ष, सजा और आदेश को किसी न्यायालय द्वारा उप-धारा (1) के तहत आवश्यक मंजूरी की अनुपस्थिति या किसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर अपील, पुष्टि या संशोधन में उलट या बदला नहीं जाएगा, जब तक कि उस न्यायालय की राय में, न्याय की विफलता वास्तव में इसके कारण नहीं हुई है। तत्काल मामले में, निश्चित रूप से, प्रारंभिक मंजूरी सचिव, डी. पी. और ए. आर. मिजोरम सरकार द्वारा दी गई थी। मामले का संज्ञान लेने के बाद, दिनांक 12.09.2013 का आदेश पारित करने से पहले, विशेष न्यायाधीश को यह पता लगाने के लिए मामले की जांच करनी चाहिए थी कि क्या मंजूरी में ऐसी त्रुटि या अनियमितता के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है। विशेष न्यायाधीश या उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा कोई तर्क दर्ज नहीं किया गया है कि सचिव द्वारा अभियोजन के लिए दी गई प्रारंभिक मंजूरी के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है।

11. गोवा राज्य बनाम बाबु थॉमस (2005) 8 एस सी सी 130 में यह न्यायालय एक ऐसे प्राधिकारी द्वारा जारी एक मंजूरी आदेश के साथ काम कर रहा था जो सक्षम नहीं था जैसा कि मामले में स्थिति भी है। उस मामले में अभियुक्त के अभियोजन के लिए जारी दुसरे मंजूरी आदेश को भी इस तथ्य के अलावा अक्षम माना गया था कि यह अपने संचालन में पूर्वव्यापी होने के लिए कथित था। उक्त मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जब विशेष न्यायाधीश द्वारा 29.03.1995

पर संज्ञान लिया गया था, तो अभियोजन पक्ष को मंजूरी देने का कोई आदेश नहीं था जिसके परिणामस्वरूप अदालत संज्ञान नहीं ले सकती थी और यह त्रुटि इतनी मौलिक थी कि इसने न्यायालय द्वारा संचालित कार्यवाही को अमान्य कर दिया। न्यायालय ने तदनुसार उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को बरकरार रखा लेकिन अभियुक्त के खिलाफ लगाए गए गंभीर आरोप को ध्यान में रखते हुए मंजूरी के नए आदेश जारी करने के लिए सक्षम प्राधिकारी को स्वतंत्रता सुरक्षित रखी।

12. बाबू थॉमस में निर्णय को नंजप्पा बनाम कर्नाटक राज्य (2015) 14 एस. सी. सी. 186 में अनुमोदन के साथ संदर्भित किया गया। निर्णयों की संख्या का उल्लेख करने और यह देखने के बाद कि मंजूरी आदेश से जुड़ी अयोग्यता के बावजूद, एक नई वैध मंजूरी देने पर वर्जित नहीं है, नंजप्पा मामले के पैरा (22) में, यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः-

> 22. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के तहत मंजूरी के महत्व के बारे में कानूनी स्थिति इस प्रकार संदेह को स्वीकार करने के लिए बहुत स्पष्ट है। सांविधिक धारा 19 (1) के खंड (ए), (बी) और (सी) के संदर्भ में ऐसी मंजूरी देने के लिए सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के अलावा किसी लोक सेवक के खिलाफ न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने से मना करता है। इस तरह की मंजूरी की वैधता के बारे में सवाल कार्यवाही के

किसी भी चरण में उठाया जा सकता है। अभियुक्त पर मुकदमा चलाने की न्यायालय की क्षमता एक वैध मंजूरी के अस्तित्व पर निर्भर करती है। यदि मंजूरी अमान्य पाई जाती है तो न्यायालय अभियुक्त को पक्षकारों को ऐसे स्तर पर भेजकर आरोपमुक्त कर सकती है जहां सक्षम प्राधिकारी कानून के अनुसार अभियोजन के लिए नई मंजूरी दे सकता है। यदि विचारण न्यायालय मंजूरी आदेश से जुड़ी अयोग्यता के बावजूद आगे बढ़ती है, तो उसे कानून की नजर में गैर-कानूनी माना जाएगा और ऐसे अभियोजन के लिए वैध मंजूरी देने पर समान अपराधों के लिए दूसरे मुकदमे को मना नहीं करेगा।

13. नंजप्पा मामले में, कई निर्णयों का उल्लेख करने के बाद, इस न्यायालय ने पैरा (23) में सिद्धांतों को संक्षेप में प्रस्तुत कियाः-

"23. यह कहने के बाद कि दो पहलू हैं जिन पर हमें तुरंत ध्यान देना चाहिए। पहला धारा 19 की उप-धारा (3) के प्रभाव से संबंधित है, जो एक अबाधित खंड से शुरू होता है। उसी पहलू के लिए भी प्रासंगिक धारा 465 सी.आर.पी.सी. होगी जिसे हमने पहले निकाला है।

23. 2. धारा 19 की उप-धारा (3) को सावधानीपूर्वक अध्ययन से पता चलता है कि यह विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित किसी भी निष्कर्ष, सजा या आदेश को इस आधार पर उलटने या

बदलने का निर्देश देता है कि मंजूरी आदेश एक त्रुटि, चूक या अनियमितता से ग्रस्त है, जब तक कि निश्चित रूप से उस न्यायालय की राय न हो जिसके समक्ष ऐसे निष्कर्ष, सजा या आदेश को अपील या संशोधन में चुनौती दी गई है कि न्याय की विफलता ऐसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के कारण हुई है। उप-धारा (3), दूसरे शब्दों में, अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण कार्यवाही में विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में इस आधार पर हस्तक्षेप करने से रोकती है कि मंजूरी खराब है, सिवाय उन मामलों के जहां अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय को लगता है कि न्याय की विफलता ऐसी अयोग्यता से हुई है। उल्लेखनीय बात यह है कि उप-धारा (3) का विशेष न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाही के लिए कोई आवेदन नहीं है, जो अभियुक्त को आरोपमुक्त करने का आदेश पारित करने के लिए स्वतंत्र है, यदि उसकी राय है कि अभियुक्त के अभियोजन को मंजूरी देने वाला एक वैध आदेश धारा 19 (1) के तहत आवश्यकतानुसार प्रस्तुत नहीं किया गया था।

23.3. उप-धारा (3), हमारी राय में, मंजूरी के आदेश में किसी भी दोष, चूक या अनियमितता के आधार पर विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को उलटने वाले उच्च न्यायालय के खिलाफ निषेध का प्रतिपादन करती है। यह एक विशेष

न्यायाधीश को कार्यवाही के किसी भी स्तर पर एक आदेश पारित करने से मना नहीं करता है जिसमें कहा गया है कि अभियोजन पक्ष इसे मंजूरी देने वाले वैध आदेश के अभाव में बनाए रखने योग्य नहीं है।

23.4. हमारी राय में, उप-धारा (3) में प्रयुक्त भाषा स्पष्ट और असंदिग्ध है। यह, हमारी राय में, उप-धारा (4) में प्रयुक्त भाषा से भी पर्याप्त रूप से स्पष्ट है, जिसके अनुसार अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय, यह जांच करते हुए कि क्या मंजूरी में त्रुटि, चूक या अनियमितता न्याय की किसी विफलता के कारण हुई थी, इस तथ्य के संबंध में होगा कि क्या आपत्ति प्रारंभिक चरण में उठाई जा सकती थी और होनी चाहिए थी। यह कहने के लिए पर्याप्त है कि उप-धारा 19 (3) और (4) का संयुक्त अध्ययन इस बात में कोई संदेह नहीं छोड़ता है कि उक्त प्रावधानों में मंजूरी के आदेश की वैधता या निर्णय, सजा या आदेश सहित कार्यवाही की वैधता को चुनौती देने की परिकल्पना की गई है। उच्च न्यायालय के समक्ष अपील या पुनरीक्षण में विशेष न्यायाधीश द्वारा परीत साजा या आदेश, न कि अभियुक्त पर मुकदमा चलाने वाले विशेष न्यायाधीश के समक्ष।

23.5. प्रावधान में अंतर्निहित तर्क स्पष्ट रूप से यह है कि यदि विचारण निष्कर्ष पर पहुंच गया है और इसके परिणामस्वरूप कोई निष्कर्ष या सजा हुई है, तो अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा इसमें केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि धारा 19 (1) के तहत अभियोजन को मंजूरी देने वाले आदेश में कुछ चूक, त्रुटि या अनियमितता थी। न्याय की विफलता वह है जिसकी ऐसे मामलों में अपीलीय या पुनरीक्षण न्यायालय तलाश करेगा और यह जांच करते समय कि क्या ऐसी कोई विफलता वास्तव में हुई थी, संबंधित न्यायालय यह भी ध्यान रखेगा कि क्या मंजूरी में त्रुटि, चूक या अनियमितता को छूते हुए आपत्ति कार्यवाही के शुरुआती चरण में उठाई जा सकती थी या नहीं, जिसका अर्थ है कि क्या इसे अपील या संशोधन में आग्रह किए जाने के बजाय परीक्षण स्तर पर उठाया जा सकता था और किया जाना चाहिए था।"

14. उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में, हस्तगत मामले को ध्यान में रखते हुए, विचारण शुरू होने से पहले ही, प्रतिवादी/अभियुक्त को उचित मंजूरी के अभाव में आरोपमुक्त कर दिया गया था, वैध मंजूरी प्राप्त करने के बाद नए/पूरक आरोप पत्र दाखिल करने में कोई बाधा नहीं थी। जब तक अभियोजन के लिए मंजूरी देने में त्रुटि, चूक या अनियमितता के कारण न्याय की विफलता नहीं होती है, तब तक

अधिनियम के तहत कार्यवाही को दूषित नहीं किया जा सकता है। नया आरोप पत्र दाखिल करने से प्रत्यर्थी के प्रति कोई पूर्वाग्रह नहीं पैदा होता है और न ही इसके परिणामस्वरूप "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों के तहत न्याय की विफलता को रोका जा सकता है।

15. भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 (2) के तहत, किसी भी व्यक्ति पर एक ही अपराध के लिए एक बार से से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा। धारा 300 Cr.P.C में कहा गया है कि एक बार दोषी ठहराए जाने या दोषमुक्त किए जाने के बाद किसी व्यक्ति पर उसी अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। पहले से विचाराधीन किसी व्यक्ति के मुकदमे को रोकने के लिए, यह दिखाया जाना चाहिए-(i) उस अपराध के लिए एक सक्षम न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया है या जिसके लिए उस मुकदमे में उस पर आरोप लगाया गया है या उन्हीं तथ्यों पर दोषी ठहराया गया है; (ii) कि उसे मुकदमे में दोषी ठहराया गया है या दोषमुक्त कर दिया गया है; और (iii) कि ऐसी दोषसिद्धि या दोषमुक्ति होना लागू है। जहाँ अभियुक्त पर बिल्कुल भी मुकदमा नहीं चलाया गया है और उसे दोषी या दोषमुक्त नहीं किया गया है, वहाँ "दोहरे खतरे" के सिद्धांतों को बिल्कुल भी लागू नहीं किया जा सकता है।

16. धारा 300 (1) Cr.P.C का पूरा आधार यह है कि जिस व्यक्ति पर एक सक्षम न्यायालय द्वारा मुकदमा चलाया गया था, एक

बार दोषमुक्त या दोषी ठहराए जाने के बाद, उसी अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जाए। जैसा कि पहले चर्चा की गई है, मामले में प्रतिवादी/अभियुक्त पर मुकदमा नहीं चलाया गया है और न ही पूर्ण मुकदमा चलाया गया है। दूसरी ओर, विशेष न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 12.09.2013 के आरोपमुक्त करने का आदेश केवल अभियोजन पक्ष से जुड़ी अयोग्यता के कारण था। जब प्रतिवादी/अभियुक्त को उचित मंजूरी की कमी के कारण इस तरह से आरोपमुक्त कर दिया गया था, तो "दोहरे खतरे" के सिद्धांत लागू नहीं होंगे। अभियोजन के लिए वैध मंजूरी प्राप्त करने के बाद नए/पूरक आरोप पत्र दाखिल करने पर कोई रोक नहीं थी। विशेष अदालत ने एक बार जब पाया कि कोई वैध मंजूरी नहीं थी, तो उसे अभियोजन पक्ष को आवश्यक कार्य करने का निर्देश देना चाहिए था। विशेष न्यायालय ने सक्षम प्राधिकारी से वैध अभियोजन मंजूरी प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त अवसर नहीं दिए हैं। विशेष न्यायालय ने सक्षम प्राधिकारी से प्राप्त वैध अभियोजन मंजूरी को प्रस्तुत करने के बाद भी मामले का संज्ञान लेने से इनकार कर दिया और उच्च न्यायालय विशेष न्यायालय के आदेश की पुष्टि करने में सही नहीं था। विशेष न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करना सही नहीं था कि अभियोजन के लिए उचित मंजूरी आदेश के साथ नए आरोप पत्र को दाखिल करना "दोहरे खतरे " के सिद्धांतों के तहत वर्जित था।

17. उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता ने उत्तरदाता द्वारा दायर अनुलग्नकों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है और प्रस्तुत किया है कि प्रत्यर्थी को दिनांक 08.07.2013 के आदेश द्वारा विभिन्न आरोपों पर विभागीय कार्यवाही से दोषमुक्त कर दिया गया है। हम इस विवाद के गुण-दोष में जाने के इच्छुक नहीं हैं और प्रतिवादी द्वारा उठाए गए सभी तर्कों को खुला रखा जाता है।

18. परिणामस्वरूप, विवादित निर्णय और आदेश दिनांक 13.08.2015 को अपास्त किया जाता है और इस अपील को स्वीकार किया जाता है। विशेष न्यायालय, पीसी अधिनियम, आइजोल, मिजोरम को निर्देश दिया गया है कि वह फाइल पर ए. सी. बी. P.S.C.No.3/2009 में दिनांकित 30.01.2014 के आरोप पत्र का संज्ञान ले और कानून के अनुसार कारवाही करे।

दिव्या पांडे

अपील स्वीकार की गयी।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।